समक्ष - जी.एस. सिंघवी ए.सी.जे. और विने मित्तल, जे

हिंदुस्तान कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड - याचिकाकर्ता

बनाम

हरियाणा राज्य और अन्य - प्रतिवादी

सी.डब्ल्यू.पी. क्रमांक 15749 ऑफ़ 2004

21 फरवरी 2005

हरियाणा सामान्य बिक्री कर अधिनियम, 1973- उप धारा 39 और 40- हरियाणा मूल्य वर्धित कर अधिनियम, 2003- उप धारा 2, 34, 61 और 62- पंजाब जनरल क्लॉजेज एक्ट, 1898- धारा 4- असेसिंग अथॉरिटी एक कंस्ट्रक्शन कंपनी द्वारा दायर रिटर्न को स्वीकार कर रही है- , 4 साल के बाद , रिविजनल अथॉरिटी 1973 एक्ट की धारा 40 के तहत कार्यवाही शुरू कर रही है- वैट द्वारा 1973 एक्ट को निरस्त किया जा रहा है। अधिनियम - 1973 अधिनियम की धारा 40 के तहत पुनरीक्षण शक्ति के प्रयोग की सीमा 5 वर्ष है जबकि वैट अधिनियम की धारा 34 के तहत सीमा मूल्यांकन आदेश की प्रति की आपूर्ति की तारीख से 3 वर्ष है - मूल्यांकन आदेश वैट के प्रारंभ होने से पहले अंतिम रूप प्राप्त कर चुके हैं - क्या वैट अधिनियम 1973 द्वारा अधिनियम के निरसन के बाद पुनरीक्षण प्राधिकरण के पास 1973 अधिनियम की धारा 40 के तहत कार्यवाही शुरू करने का क्षेत्राधिकार जारी है - **अभिनिर्णित** , 1898 अधिनियम की धारा 4 में प्रावधान है कि जब तक कोई अलग इरादा प्रकट नहीं होता है, निरसन नहीं होता है किसी भी अधिकार, विशेषाधिकार या दायित्व या ऐसे किसी भी अधिकार,

विशेषाधिकार, दायित्व आदि के संबंध में किसी भी कानूनी कार्यवाही या उपाय को प्रभावित नहीं करेगा - वैट अधिनियम की धारा 61 लंबित आवेदनों, अपीलों, संशोधनों और किए गए या पसंदीदा अन्य कार्यवाहियों को बचाती है। 1973 अधिनियम के तहत कोई भी प्राधिकरण - धारा 61 का अधिनियमन विधानमंडल द्वारा व्यक्त एक अलग इरादे को दर्शाता है, इस प्रकार, 1898 अधिनियम की धारा 4 के संचालन को स्पष्ट रूप से बाहर कर देता है - याचिका की अनुमति दी गई और मूल्यांकन आदेश को संशोधित करने वाले पुनरीक्षण प्राधिकरण के आदेश रद्द कर दिए गए।

अभिनिर्णित - पुनरीक्षण प्राधिकारी को प्रदत्त पुनरीक्षण की शक्ति को किसी पक्षकार को प्रदत्त अपील के अधिकार के समान नहीं माना जा सकता है। 1973 अधिनियम की धारा 40 ने केवल पुनरीक्षण प्राधिकरण को एक शक्ति प्रदान की, जिससे पुनरीक्षण प्राधिकरण को स्वतः ही शक्तियां मिल गईं। आदेश में संशोधन की मांग करते हुए याचिका दायर करने के लिए विभाग को कोई संबंधित अधिकार नहीं दिया गया था। किसी क़ानून में किसी सक्षम प्राधिकारी को कुछ शक्तियाँ प्रदान करने वाले सक्षम प्रावधान को कोई अधिकार नहीं माना जा सकता है, किसी-विभाग के पक्ष में निहित अधिकार तो दूर।

(पैरा 23 और 24)

इसके अलावा, यह माना गया कि, सामान्य धारा अधिनियम की धारा 4 के प्रावधानों को पढ़ने से पता चलता है कि जब तक कोई अलग इरादा प्रकट न हो, निरसन किसी भी अधिकार,

विशेषाधिकार या दायित्व या किसी भी कानूनी कार्यवाही या ऐसे किसी भी अधिकार, विशेषाधिकार , दायित्व आदि के संबंध में उपाय को प्रभावित नहीं करता है। वैट अधिनियम की धारा 61 के आधार पर, विधानमंडल ने 1973 अधिनियम को निरस्त करते हुए, उस अधिनियम के तहत किसी भी प्राधिकरण को लंबित आवेदन, अपील, पुनरीक्षण और अन्य कार्यवाही को बचाया और निपटान के लिए स्थानांतरित कर दिया, उस अधिकारी या प्राधिकारी द्वारा, जिसके पास नए अधिनियम के तहत ऐसे आवेदन आदि पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र होता। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि वैट अधिनियम की धारा 61 को लागू करते समय विधानमंडल द्वारा एक अलग मंशा व्यक्त की गई है। इस प्रकार, उपरोक्त निरसन खंड का प्रभाव स्पष्ट रूप से सामान्य खंड अधिनियम की धारा 4 के संचालन को बाहर करता है। इसलिए, वह अनुभाग पुनरीक्षण प्राधिकरण द्वारा की गई कार्रवाई का बचाव करने के लिए राज्य के बचाव में नहीं आ सकता है।

(पैरा 25)

विने मित्तल, जे,

(1) इन याचिकाओं में, याचिकाकर्ता ने संयुक्त उत्पाद शुल्क और कराधान आयुक्त (रेंज)-सह-पुनरीक्षण प्राधिकरण, अंबाला (प्रतिवादी संख्या 2) द्वारा पारित आदेशों को रद्द करने की प्रार्थना की है।

(2) सुविधा के लिए हमने तथ्य सी.डब्लू.पी. संख्या 15749 ऑफ़ 2004 से लिए हैं।

(3) याचिकाकर्ता - हिंदुस्तान कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड, यमुनानगर (बाद में याचिकाकर्ता-कंपनी के रूप में संदर्भित) निर्माण के व्यवसाय में लगी हुई है और पूरे देश में अपना परिचालन क्षेत्र होने का दावा करती है। हरियाणा राज्य में, यह हरियाणा सामान्य बिक्री कर अधिनियम, 1973 (इसके बाद 1973 अधिनियम के रूप में संदर्भित) और केंद्रीय बिक्री कर अधिनियम, 1956 के तहत (इसके बाद केंद्रीय अधिनियम के रूप में संदर्भित) के प्रावधान के तहत एक डीलर के रूप में विधिवत पंजीकृत है। और मूल्यांकन प्राधिकारी, यमुनानगर द्वारा मूल्यांकन किया जा रहा है। निर्धारण वर्ष 1998-99 के लिए, याचिकाकर्ता-कंपनी ने 20,65,04,077 रुपये का सकल कारोबार लौटाया था। रिटर्न के अनुसार, याचिकाकर्ता-कंपनी की कर देनदारी रु. 40,89,786. हालाँकि, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि उसने पहले ही 1,26,01,520 रुपये की कर राशि का भुगतान कर दिया था। जो अनुबंधकर्ताओं द्वारा स्रोत पर काटा गया था, उसने 81,11,734 रुपये की वापसी के लिए आवेदन दायर किया। याचिकाकर्ता-कंपनी द्वारा दायर रिटर्न को मूल्यांकन जो की प्राधिकारी द्वारा स्वीकार कर लिया गया - आदेश अनुलग्नक पाई के तहत और की गई प्रार्थना के संदर्भ में रिफंड दिया गया। मूल्यांकन को अंतिम रूप देने के चार साल से अधिक समय के बाद, प्रतिवादी नंबर 2 ने याचिकाकर्ता-कंपनी को निम्नलिखित आधारों पर आदेश के प्रस्तावित रिफंड के खिलाफ कारण बताने के लिए दिनांक 7 जून, 2004 (अनुलग्नक पी 2) को नोटिस जारी किया: -

"(a) आपने गलत रिटर्न दाखिल किया है और मूल्यांकन के प्रयोजन के लिए कार्य अनुबंध में उपयोग की गई सामग्री की केवल लागत मूल्य को लेकर गलत तरीके से मूल्यांकन तैयार किया गया है। रिटर्न और मूल्यांकन **गैनन डंकरले एंड कंपनी और अन्य बनाम राजस्थान राज्य आदि** (सी.ए. नं. 4861-4864 ऑफ़ 1992) जो की (1993) 88 STC 204 (SC) में रिपोर्ट किया गया) के मामले में सुप्रीम कोर्ट द्वारा निर्धारित कानून के अनुसार तैयार किया जाना चाहिए, इस निर्णय के अनुसार कार्य अनुबंध में शामिल वस्तुओं का मूल्य पूरे कार्य अनुबंध के मूल्य को ध्यान में रखकर और उसमें से श्रम और सेवाओं के लिए शुल्क घटाकर निर्धारित किया जाना चाहिए।

(b) सीमेंट पर भुगतान किए गए कर के रूप में रिफंड की अनुमति गलत तरीके से दी गई है क्योंकि वहां कोई विनिर्माण नहीं हुआ था। इसे नियम 24(i) के तहत कर भुगतान बिक्री के रूप में अनुमति दी जानी चाहिए थी।

(c) 17446674 रुपये का शुल्क वापस लेना या उत्पाद शुल्क की राशि गलत तरीके से टर्नओवर से कम कर दी गई है क्योंकि सरकार द्वारा कटौती योग्य अनुमत कोई प्रोत्साहन/सब्सिडी नहीं है।

(4) याचिकाकर्ता-कंपनी ने प्रतिवादी नंबर 2 द्वारा जारी नोटिस का विरोध किया। उसकी ओर से दायर जवाब में, यह दलील दी गई कि 1973 अधिनियम को निरस्त करने के बाद हरियाणा

मूल्य वर्धित कर, 2003 (संक्षेप में, वैट) अधिनियम), प्रतिवादी संख्या 2 के पास पुराने अधिनियम के तहत कार्यवाही शुरू करने का अधिकार क्षेत्र नहीं था। यह दावा किया गया था कि 1 अप्रैल, 2003 यानी वैट अधिनियम के प्रारंभ होने की तारीख पर कोई भी कार्यवाही लंबित नहीं थी या लंबित नहीं मानी गई थी और इसलिए, निरस्त अधिनियम के तहत कोई कार्रवाई नहीं की जा सकती थी। यह भी प्रचारित किया गया कि मूल्यांकन आदेश की वापसी के लिए जारी किया गया नोटिस परिसीमा द्वारा वर्जित था। योग्यता के आधार पर, यह दलील दी गई कि उपरोक्त रिटर्न दाखिल करते समय, उसने निर्यात आयात नीति के अनुसार, भारत सरकार से प्राप्त शुल्क ड्रा के कारण कटौती का दावा किया था। आगे दलील दी गई है कि उपरोक्त कटौती सीमेंट और स्टील पर निर्माता द्वारा भुगतान की गई उत्पाद शुल्क राशि के संबंध में थी, जिससे याचिकाकर्ता- कंपनी ने सामान खरीदा था, जिसका उपयोग परियोजना के निष्पादन में किया गया था (स्थायी रूप से कार्यों में स्थानांतरित किया गया था)। आगे यह दलील दी गई है कि सीमेंट और स्टील पर उत्पाद शुल्क की प्रतिपूर्ति की गई थी क्योंकि याचिकाकर्ता-कंपनी द्वारा निष्पादित परियोजना को इंटरनेशनल बैंक फॉर रिकंस्ट्रक्शन एंड डेवलपमेंट (आई बी आर डी) द्वारा वित्त पोषित किया गया था और ऐसी परियोजनाओं को आपूर्ति को "मानित निर्यात" उपरोक्त लाभों के लिए पात्र माना जाना चाहिए। यह भी दावा किया गया है कि याचिकाकर्ता-कंपनी की उपरोक्त कटौती, **बिक्री कर आयुक्त, यूपी बनाम**

इंडियन एल्युमीनियम केबल लिमिटेड[1] में सुप्रीम कोर्ट द्वारा निर्धारित कानून के अनुसार थी। याचिकाकर्ता-कंपनी की ओर से दायर दिनांक 16 जून, 2004 (अनुलग्नक पी 3) पर विचार करने के बाद, प्रतिवादी नंबर 2 ने 12 जुलाई, 2004 (अनुलग्नक पी 5) को आदेश पारित किया, जिसके तहत उन्होंने मूल्यांकन आदेश को संशोधित किया और घोषणा की कि इससे 65,35,632 रुपये की राशि की वसूली हुई।

(5) याचिकाकर्ता-कंपनी ने आदेश अनुलग्नक पी 5 को मुख्य रूप से उन आधारों पर चुनौती दी है जो कारण बताओ नोटिस के जवाब में उसके द्वारा उठाए गए थे।

(6) उत्तरदाताओं की ओर से दायर लिखित बयान में, इस आधार पर रिट याचिका की स्थिरता पर आपत्ति जताई गई है कि याचिकाकर्ता-कंपनी 1973 की धारा 39 के तहत उपलब्ध अपील के वैकल्पिक उपाय का लाभ उठाने में विफल रही है। 1 अप्रैल, 2003 से वैट अधिनियम लागू करके 1973 अधिनियम के निरसन पर उत्तरदाताओं द्वारा कोई विवाद नहीं किया गया है। हालाँकि, उत्तरदाताओं ने **मैसर्स खजान चंद नाथी राम बनाम हरियाणा राज्य और अन्य**[2] मामले में इस न्यायालय की डिवीजन बेंच के फैसले और पंजाब सामान्य धारा अधिनियम, 1898 (संक्षेप में सामान्य खंड अधिनियम) के सेक्शन 4 के प्रावधानों पर भरोसा किया है। **खज़ान चंद नाथी राम के मामले (supra)** में पूर्वोक्त घोषणा के साथ-साथ सामान्य खंड अधिनियम

[1] (1999) 115 S.T.C. 172
[2] (2004) 136 S.T.C. 261

के प्रावधानों के आधार पर, उत्तरदाताओं द्वारा यह दावा किया गया है कि 1973 अधिनियम के निरसन पर किसी भी अधिकार, विशेषाधिकार या दायित्व के तहत पुराने कानून को पुराने कानून के तहत शासित किया जाना जारी है और इसलिए, प्रतिवादी नंबर 2 के पास अनुबंध पी 5 पर भले ही 1973 अधिनियम निरस्त हो गया हो , आदेश पारित करने का अधिकार क्षेत्र था। **गैनन डंकरले एंड कंपनी और अन्य बनाम राजस्थान राज्य आदि**[3]में सुप्रीम कोर्ट के फैसले पर भी भरोसा किया गया है और यह कहा गया है कि प्रतिवादी नंबर 2 ने मूल्यांकन द्वारा पारित आदेश को संशोधित करके कोई अवैधता नहीं की है।

(7) हमने याचिकाकर्ता-कंपनी की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री के.एल. गोयल और उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित हरियाणा के वरिष्ठ उप महाधिवक्ता श्री जसवंत सिंह को सुना है और उनकी सहायता से मामले के रिकॉर्ड को भी देखा है।

(8) शुरुआत में, हम उल्लेख कर सकते हैं कि याचिकाकर्ता-कंपनी के विद्वान वकील श्री के.एल. गोयल ने निष्पक्ष रूप से कहा कि यदि यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि प्रतिवादी संख्या 2 के पास अनुबंध पी 5 आदेश पारित करने का अधिकार क्षेत्र है, तो उसका मुवक्किल 1973 अधिनियम की धारा 39 के तहत अपील के उपाय का लाभ उठाने की स्वतंत्रता दी जा सकती है। साथ ही, उन्होंने तर्क दिया कि अपील के वैकल्पिक उपाय को रिट याचिका की

---

[3] (1993) 88 S.T.C. 204

स्थिरता के लिए एक बाधा के रूप में नहीं माना जा सकता है क्योंकि प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा पारित आदेश अनुबंध पी 5 अधिकार क्षेत्र की अंतर्निहित कमी से ग्रस्त है।

(9) हमने वर्तमान याचिका की पोषणीयता के संबंध में उत्तरदाताओं द्वारा उठाई गई प्रारंभिक आपत्ति और याचिकाकर्ता-कंपनी के विद्वान वकील द्वारा उठाए गए तर्कों पर पूर्ण विचार किया है। यह नियम कि उच्च न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट याचिका पर विचार नहीं करेगा, यदि याचिकाकर्ता के लिए एक प्रभावी वैकल्पिक उपाय उपलब्ध है, तो यह एक वैधानिक नियम नहीं है, बल्कि न्यायालयों द्वारा विकसित स्व-लगाए गए संयम का एक नियम है। इस न्यायालय में सर्वमान्य अपवाद हैं, जिनमें से कुछ को **बाबू प्रकाश चंद्र माहेश्वरी बनाम एंट्रीम जिला परिषद (अब जिला परिषद, मुजफ्फरनगर)**[4] **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम ब्रिज एंड रूफ कंपनी (इंडिया) लिमिटेड**[5] और **केरल एस.ई.बी. बनाम कुरियन ई. कलैथिल**[6] मामले में देखा गया है। न्यायालयों द्वारा बनाए गए अपवादों में से एक यह है कि यदि चुनौती के तहत आदेश क्षेत्राधिकार के बिना है, तो पीड़ित पक्ष को अपील आदि के वैकल्पिक उपाय के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता है। वर्तमान मामले में, याचिकाकर्ता ने मुख्य रूप से इस आधार पर आक्षेपित आदेश को चुनौती दी है कि प्रतिवादी नंबर 2 के पास 1973 अधिनियम के तहत कार्यवाही शुरू करने का अधिकार क्षेत्र नहीं था। इसलिए, हमें

---

[4] AIR 1969 S.C. 556
[5] (1996) 6 S.C.C. 22
[6] AIR 2000 SC 2573

वैकल्पिक उपचार की उपलब्धता के आधार पर इसे लागू न करने का कोई औचित्य नहीं दिखता।

मैरिट पर , श्री के.एल. गोयल ने प्रस्तुत किया कि 12 मई, 2000 का आदेश अंतिम रूप ले चुका था, क्योंकि 1973 अधिनियम की धारा 40 के तहत इसे तब तक संशोधित नहीं किया गया था जब तक कि उस अधिनियम को वैट द्वारा निरस्त नहीं कर दिया गया था। अधिनियम और तर्क दिया कि नए अधिनियम के लागू होने के बाद, प्रतिवादी नं. 2, 1973 अधिनियम की धारा 40 के तहत पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग नहीं कर सका। उन्होंने **खज़ान चंद नाथी राम के मामले (supra)** में फैसले को अलग करते हुए कहा कि उस मामले में जिस प्रश्न पर विचार किया गया और निर्णय लिया गया वह 1973 अधिनियम के तहत अपील के उपाय का लाभ उठाने के पीड़ित पक्ष के अधिकार से संबंधित है। उन्होंने वादी के लिए उपलब्ध अपील के अधिकार और पुनरीक्षण की शक्ति के बीच अंतर किया, जिसका प्रयोग सक्षम प्राधिकारी द्वारा किया जा सकता है और तर्क दिया कि 1973 अधिनियम के निरस्त होने के बाद, प्रतिवादी संख्या 2, 1973 अधिनियम की धारा 40 के तहत कार्यवाही शुरू नहीं कर सकता था। इस तर्क के समर्थन में, श्री गोयल ने **शिव शक्ति सहकारी हाउसिंग सोसाइटी, नागपुर बनाम स्वराज डेवलपर्स और अन्य**[7] में सुप्रीम कोर्ट के फैसले पर भरोसा किया श्री गोयल ने तर्क दिया कि विवादित आदेश को अमान्य घोषित किया जा सकता है क्योंकि भले ही , 1973

[7] (2003) 6 SCC 659

अधिनियम की धारा 40 के संदर्भ में, पुनरीक्षण शक्ति के प्रयोग की सीमा पांच वर्ष है, वैट अधिनियम की धारा 34 के तहत, उक्त शक्ति का प्रयोग मूल्यांकन आदेश की प्रति की आपूर्ति की तारीख से तीन साल के भीतर किया जा सकता है। उन्होंने आगे कहा कि सीमा से संबंधित प्रावधान प्रक्रियात्मक है और इसलिए, वर्ष 2004 में यानी मूल्यांकन की तारीख से चार साल की समाप्ति के बाद शुरू की गई कार्यवाही स्पष्ट रूप से समय से बाधित थी। अंत में, उन्होंने तर्क दिया कि वैट अधिनियम के तहत पुनरीक्षण प्राधिकार की शक्ति किसी भी अधिकारी को प्रदान नहीं की गई है और इसलिए, प्रतिवादी संख्या। 2 अधिनियम की धारा 40 के तहत नोटिस जारी नहीं कर सकता था और मूल्यांकन के आदेश को संशोधित नहीं कर सकता था।

(11) श्री जसवन्त सिंह, वरिष्ठ उप महाधिवक्ता, हरियाणा ने आक्षेपित आदेश का समर्थन किया और तर्क दिया कि प्रतिवादी नं. 2 ने 1973 अधिनियम की धारा 40 के तहत कार्यवाही शुरू करके कोई क्षेत्राधिकार संबंधी त्रुटि नहीं की क्योंकि उस अधिनियम में विभाग द्वारा अपील दायर करने का कोई प्रावधान नहीं है। उन्होंने बताया कि धारा 39 के तहत, एकमात्र निर्धारिती ही अपील दायर कर सकता है, लेकिन कर निर्धारण प्राधिकारी के आदेश पर सवाल उठाने का संबंधित अधिकार विभाग को नहीं दिया गया है। श्री जसवन्त सिंह ने आगे तर्क दिया कि 1973 अधिनियम की धारा 40 के तहत विचार की गई पुनरीक्षण की शक्ति उस अधिनियम की धारा 39 के तहत निर्धारिती को प्रदत्त अपील के अधिकार के समान है और मैसर्स खज़ान में डिवीजन बेंच के फैसले के मद्देनजर चंद नाथी राम के मामले में, पुनरीक्षण प्राधिकारी का

अधिकार 1973 अधिनियम के निरस्त होने के बाद भी जारी माना जाएगा। उन्होंने सामान्य खंड अधिनियम की धारा 4 पर भी भरोसा किया और तर्क दिया कि स्वत: संशोधन से संबंधित प्रावधान एक अधिकार, विशेषाधिकार, दायित्व या दायित्व की प्रकृति में है और निरस्त अधिनियम के तहत अर्जित या खर्च किया गया है और इसलिए 1973 अधिनियम के निरस्त होने के बाद भी, इसका प्रयोग किया जा सकता है । श्री जसवन्त सिंह ने शिव शक्ति सहकारी हाउसिंग सोसाइटी के मामले (supra) में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले को यह तर्क देकर अलग कर दिया कि उक्त निर्णय नागरिक प्रक्रिया संहिता की धारा 115 की व्याख्या पर आधारित है और उसके अनुपात को वर्तमान मामले में लागू नहीं किया जा सकता है। इस तर्क के समर्थन में, श्री जसवन्त सिंह ने **सीमेंस इंडिया लिमिटेड बनाम महाराष्ट्र राज्य**[8] के फैसले पर भरोसा किया। अंत में, उन्होंने तर्क दिया कि कार्यवाही प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा शुरू की गई थी और इसको कालबाधित नहीं माना जा सकता क्योंकि 1973 अधिनियम की धारा 40 के तहत शक्ति का प्रयोग करने की सीमा 5 वर्ष है।

(12) हमने पक्षों के विद्वान वकील के प्रतिद्वंद्वी तर्कों पर विचारपूर्वक विचार किया है। विद्वान वकील की सक्षम सहायता से, हमने कानून के विभिन्न प्रावधानों, बार में उद्धृत निर्णयों और वर्तमान मामले के रिकॉर्ड का भी अध्ययन किया है।

---

[8] (1986)62 STC 40

(13) पक्षों के विद्वान वकील द्वारा उठाए गए विभिन्न तर्कों पर विस्तार करने से पहले, हम वर्तमान विवाद के निर्णय के लिए आवश्यक विभिन्न अधिनियमों के प्रावधानों के प्रासंगिक उद्धरणों पर ध्यान देना उचित समझते हैं। यह इस प्रकार है:-

"हरियाणा सामान्य बिक्री कर अधिनियम, 1973

धरा 39 : अपील

(1) इस अधिनियम या उसके तहत बनाए गए नियमों के तहत पारित धारा 40 के तहत एक आदेश सहित प्रत्येक मूल आदेश के खिलाफ अपील -

(a) यदि आदेश किसी मूल्यांकन प्राधिकारी, चेक-पोस्ट या बैरियर के प्रभारी अधिकारी या उप उत्पाद शुल्क और कराधान आयुक्त के पद से नीचे के अधिकारी द्वारा किया जाता है, तो उप उत्पाद शुल्क और कराधान आयुक्त या राज्य के ऐसे अन्य अधिकारी सरकार अधिसूचना द्वारा नियुक्त कर सकती है, को की जाती है;

(b) यदि आदेश उप-उत्पाद एवं कराधान आयुक्त, या किसी अन्य अधिकारी द्वारा, जो उप-उत्पाद एवं कराधान आयुक्त के पद से नीचे का न हो, आयुक्त या ऐसे अन्य अधिकारी द्वारा किया जाता है, जिसे राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा नियुक्त कर सकती है;

(c) यदि आदेश आयुक्त द्वारा ट्रिब्यूनल को दिया जाता है।

(2) उप-उत्पाद एवं कराधान आयुक्त या उप-धारा (1) के खंड (a) के तहत राज्य सरकार द्वारा नियुक्त अधिकारी या खंड (1) के तहत आयुक्त या राज्य सरकार द्वारा नियुक्त अधिकारी द्वारा अपील में पारित आदेश (b) (c) उप-धारा के आगे ट्रिब्यूनल में अपील की जाएगी।

(3) अपीलीय प्राधिकारी पहली बार, किसी अपील में किसी भी डीलर की ओर से कोई खाता रजिस्टर, रिकॉर्ड या दस्तावेज़ साक्ष्य में प्राप्त नहीं करेगा जब तक कि लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों से वह यह नहीं मानता है कि ऐसा खाता रजिस्टर, रिकॉर्ड या दस्तावेज़ वास्तविक हैं और नीचे दिए गए प्राधिकारी के समक्ष इन्हें प्रस्तुत करने में विफलता डीलर के नियंत्रण से परे कारणों से थी।

(4) उप-धारा (2) के तहत अपील पर ट्रिब्यूनल द्वारा पारित प्रत्येक आदेश, धारा 42 के प्रावधानों के अधीन, अंतिम होगा।

(5) किसी भी अपील पर तब तक विचार नहीं किया जाएगा जब तक कि वह उस आदेश की तारीख से साठ दिनों के भीतर दायर न की जाए जिसके खिलाफ अपील की गई है और अपीलीय प्राधिकारी संतुष्ट नहीं है कि राशि। निर्धारित कर और व्यक्ति से वसूली योग्य जुर्माना और ब्याज, यदि कोई हो, का भुगतान कर दिया गया है:

बशर्ते कि उक्त प्राधिकारी, यदि इस बात से संतुष्ट है कि व्यक्ति निर्धारित कर की पूरी राशि, या लगाया गया जुर्माना, या देय ब्याज का भुगतान करने में असमर्थ है, तो वह अपीलकर्ता द्वारा स्वीकार किए गए कर और ब्याज की राशि का भुगतान कर सकता है। देय राशि का

भुगतान कर दिया गया है, कारणों को लिखित रूप में दर्ज करते हुए, अपील पर विचार करें और अपील प्राधिकारी की संतुष्टि के लिए निर्धारित तरीके से बैंक गारंटी या पर्याप्त सुरक्षा प्रस्तुत करने के अधीन शेष राशि की वसूली पर रोक लगा सकते हैं:

बशर्ते कि किसी भी आदेश के खिलाफ अपील के मामले में, जिसे उचित प्राधिकारी द्वारा अपीलकर्ता को सूचित किया जाना है, साठ दिनों की अवधि अपीलकर्ता द्वारा आदेश की प्रति प्राप्त होने की तारीख से शुरू होगी और मामले में इस अधिनियम के तहत किए गए किसी अन्य आदेश के खिलाफ अपील की, आदेश की प्रमाणित प्रति प्राप्त करने में लगने वाला समय साठ दिनों की अवधि की गणना में शामिल नहीं किया जाएगा।

(6) धारा 4 की उपधारा (10) के तहत ट्रिब्यूनल द्वारा बनाए गए नियमों के अधीन और प्रक्रिया के ऐसे नियमों के अधीन, जो ट्रिब्यूनल के अलावा किसी अपीलीय प्राधिकारी के संबंध में निर्धारित किए जा सकते हैं, एक अपीलीय प्राधिकारी अपील पर ऐसा आदेश पारित कर सकता है यह न्यायसंगत और उचित माना जाता है, जिसमें इस अधिनियम के तहत कर या जुर्माना या ब्याज या सभी की राशि बढ़ाने वाला आदेश भी शामिल है।

(7) एक मूल्यांकन प्राधिकारी ट्रिब्यूनल के समक्ष अपील में उस अधिकारी के आदेश को चुनौती दे सकता है, जिस पर राज्य सरकार ने धारा 40 की उपधारा (2) के तहत आयुक्त की शक्तियां प्रदान की हैं, तारीख से एक वर्ष के भीतर। आदेश के विरुद्ध अपील की गई।

धारा-40 पुनरीक्षण

“(1) आयुक्त अपने स्वयं के प्रस्ताव पर अधिनियम की धारा 3 की उप-धारा (1) के तहत नियुक्त किसी भी अधिकारी या किसी मूल्यांकन प्राधिकारी की सहायता के लिए पहले से लंबित या उसके द्वारा निपटाए गए किसी भी मामले का रिकॉर्ड मांग सकता है या अपीलीय प्राधिकारी, ट्रिब्यूनल के अलावा, किसी कार्यवाही या उसमें दिए गए किसी आदेश की वैधता या औचित्य के बारे में खुद को संतुष्ट करने के प्रयोजनों के लिए और उसके संबंध में ऐसा आदेश पारित कर सकता है जैसा वह उचित समझे:

बशर्ते कि कोई भी आदेश, आदेश की तारीख से पांच वर्ष की अवधि की समाप्ति के बाद इस प्रकार संशोधित नहीं किया जाएगा:

बशर्ते कि अवधि की उपरोक्त सीमा वहां लागू नहीं होगी जहां समान मामले में आदेश ट्रिब्यूनल या किसी न्यायालय के निर्णय के परिणामस्वरूप संशोधित किया गया हो।

बशर्ते कि निर्धारिती या किसी अन्य व्यक्ति को इस उप-धारा के तहत पुनरीक्षण शक्तियों को लागू करने का कोई अधिकार नहीं होगा।

(2) राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा किसी अधिकारी को उपधारा (1) के तहत आयुक्त की शक्तियां ऐसी शर्तों के अधीन और ऐसे क्षेत्रों के संबंध में प्रयोग करने के लिए प्रदान कर सकती है जो अधिसूचना में निर्दिष्ट की जा सकती हैं।

(3) इस धारा के तहत कोई भी आदेश पारित नहीं किया जाएगा जो किसी व्यक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है जब तक कि ऐसे व्यक्ति को सुनवाई का उचित अवसर नहीं दिया गया हो। (नियम 60)।"

हरियाणा मूल्य वर्धित कर अधिनियम, 2003

2. (1) इस अधिनियम में जब तक संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो-

(a) ** ** ** **

(b) ** ** ** **

(c) ** ** ** **

(d) "निर्धारिती" का अर्थ है कोई भी व्यक्ति जिसे इस अधिनियम या उसके तहत बनाए गए नियमों के तहत कोई कर, ब्याज, जुर्माना, शुल्क या कोई अन्य राशि का भुगतान करना आवश्यक है:

(e) "मूल्यांकन प्राधिकारी" का अर्थ है राज्य सरकार द्वारा इस अधिनियम के तहत कोई भी मूल्यांकन करने और इस अधिनियम के तहत आवश्यक अन्य कर्तव्यों को पूरा करने के लिए अधिकृत कोई भी व्यक्ति:

** ** ** **

** ** ** **

(zc) "पंजीकृत" का अर्थ इस अधिनियम के तहत पंजीकृत है;

(zd) "संशोधन प्राधिकारी" का अर्थ उस व्यक्ति से है जो इस अधिनियम के तहत पुनरीक्षण की शक्ति का प्रयोग करता है:

** ** ** **

** ** ** **

(zo) "कर लगाने वाले प्राधिकारी" का अर्थ इस अधिनियम के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए धारा 55 की उप-धारा (1) के तहत नियुक्त सहायक उत्पाद शुल्क और कराधान अधिकारी के पद से नीचे का अधिकारी नहीं है और इसमें एक मूल्यांकन प्राधिकारी और एक पुनरीक्षण प्राधिकारी शामिल है, लेकिन इसमें एक अपीलीय, प्राधिकारी शामिल नहीं है।

** ** ** **

** ** ** **

धारा 34 : पुनरीक्षण

(1) आयुक्त, अपने स्वयं के प्रस्ताव पर, किसी कार्यवाही या किसी की वैधता या औचित्य के बारे में खुद को संतुष्ट करने के प्रयोजनों के लिए किसी कर प्राधिकारी के समक्ष लंबित या उसके द्वारा निपटाए गए किसी भी मामले का रिकॉर्ड मांग सकता है। उसमें दिया गया आदेश

जो राज्य के हितों के लिए प्रतिकूल है और संबंधित व्यक्ति को सुनवाई का उचित अवसर देने के बाद, उसके संबंध में ऐसा आदेश पारित कर सकता है जैसा वह उचित समझे:

बशर्ते कि कर निर्धारण प्राधिकारी द्वारा पारित किसी भी आदेश को किसी ऐसे मुद्दे पर संशोधित नहीं किया जाएगा जो अपील पर या ऐसे आदेश से किसी अन्य कार्यवाही में पहले लंबित है, या किसी अपीलीय प्राधिकारी या उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय द्वारा तय किया गया है, जैसा कि मामला हो सकता है:

बशर्ते कि किसी भी आदेश को निर्धारिती को ऐसे आदेश की प्रति की आपूर्ति की तारीख से तीन साल की अवधि की समाप्ति के बाद संशोधित नहीं किया जाएगा, सिवाय इसके कि जहां आदेश कानून में पूर्वव्यापी परिवर्तन के परिणामस्वरूप या आधार पर संशोधित किया गया हो किसी समान मामले में ट्रिब्यूनल के निर्णय का या उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय द्वारा घोषित कानून के आधार पर।

(2) राज्य सरकार, आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, किसी भी अधिकारी को, जो उप-उत्पाद शुल्क और कराधान आयुक्त के पद से नीचे का न हो, उप-धारा (1) के तहत आयुक्त की शक्तियां ऐसे अपवादों, शर्तें और प्रतिबंध जो अधिसूचना में निर्दिष्ट किए जा सकते हैं, के अधीन प्रयोग करने के लिए प्रदान कर सकती है , और जहां एक अधिकारी जिसे ऐसी शक्तियां प्रदान की गई हैं, इस धारा के तहत एक आदेश पारित करता है, ऐसे आदेश को उप-धारा (1) के तहत आयुक्त द्वारा पारित किया गया माना जाएगा।

** ** ** **

** ** ** **

धारा 61. निरसन और बचाना

(1) हरियाणा सामान्य बिक्री कर अधिनियम, 1973 (1973 का 20), इसके द्वारा निरस्त किया जाता है:

(2) उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, -

(a) उक्त अधिनियम के तहत किसी भी प्राधिकारी को किया गया या पसंद किया गया कोई भी आवेदन, अपील, पुनरीक्षण या अन्य कार्यवाही, और इस अधिनियम के प्रारंभ में लंबित, ऐसे प्रारंभ के बाद, अधिकारी या प्राधिकारी को स्थानांतरित और निपटाया जाएगा जिसके पास इस अधिनियम के तहत ऐसे आवेदन, अपील, पुनरीक्षण या अन्य कार्यवाही पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र होता जैसे कि यह उस तारीख को लागू होता जिस दिन ऐसा आवेदन, अपील, पुनरीक्षण या अन्य कार्यवाही की गई थी या पसंद की गई थी:

** ** ** **

** ** ** **

धारा 62 :

निरस्त अधिनियम में निहित कानून के किसी भी प्रावधान में किसी अधिकारी, प्राधिकारी या न्यायाधिकरण को कोई भी संदर्भ, धारा 61 में निहित प्रावधानों को प्रभावी करने के उद्देश्य से, संबंधित अधिकारी, प्राधिकारी या न्यायाधिकरण के संदर्भ के रूप में माना जाएगा और यदि कोई प्रश्न उठता है कि ऐसा संबंधित अधिकारी, प्राधिकारी या न्यायाधिकरण कौन है, तो उस पर राज्य सरकार का निर्णय अंतिम होगा।

** ** ** **

** ** ** **

पंजाब जनरल क्लॉज़ एक्ट, 1898

धारा - 4

"**4. निरसन का प्रभाव.**–जहां यह अधिनियम या कोई पंजाब अधिनियम *[--] किसी अधिनियम को निरस्त करता है, तब तक, जब तक कि कोई भिन्न आशय प्रकट न हो, निरसन–

(a) ** ** ** **

(b) ** ** ** **

(c) इस प्रकार निरस्त किए गए किसी अधिनियम के तहत अर्जित या उपगत किए गए किसी भी अधिकार, विशेषाधिकार, दायित्व या दायित्व को प्रभावित करना; या

(d) ** ** ** **

(e) उपरोक्त किसी भी अधिकार, विशेषाधिकार, दायित्व, दायित्व, जुर्माना, जब्ती या सजा के संबंध में किसी भी जांच, कानूनी कार्यवाही या उपाय को प्रभावित करेगा:

और ऐसी कोई भी जांच, कानूनी कार्यवाही या उपाय शुरू किया जा सकता है, जारी रखा जा सकता है या लागू किया जा सकता है, और ऐसा कोई जुर्माना, ज़ब्ती या सज़ा लगाई जा सकती है जैसे कि निरसन अधिनियम पारित नहीं किया गया था।

(14) अब हम कुछ न्यायिक उदाहरणों का उल्लेख करेंगे जिनका इन याचिकाओं में उठने वाले प्रश्न पर प्रभाव पड़ता है। **मन मोहन लाई बनाम बी.डी. गुप्ता**[9] में, इस न्यायालय की एक खंडपीठ ने निम्नानुसार निर्णय दिया:-

'इस धारा (दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम 1958 की धारा 57) की उप-धारा (2) में सभी मुकदमों और अन्य कार्यवाही के शब्दों की पार्टियों के विद्वान वकील द्वारा दो अलग-अलग तरीकों से व्याख्या करने की मांग की गई है। याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील श्री हरदयाल हार्डी का आग्रह है कि इन शब्दों में अपील और संशोधन भी शामिल हैं, जबकि उत्तरदाताओं के विद्वान वकील श्री आर.एस. नरूला का तर्क है कि उनमें ऐसा नहीं है। इन शब्दों की व्याख्या इस न्यायालय के दो विद्वान न्यायाधीशों ने भी दो अलग-अलग तरीकों से की है। **श्री कृष्ण अग्रवाल बनाम सत्य देव (1959) 61 पी.एल.आर. 574** में बिशन नारायण जे. ने माना है कि ये शब्द केवल ट्रायल कोर्ट में मूल कार्यवाही को संदर्भित करते हैं और इसमें अपील या संशोधन

---

[9] (1962) 64 P.L.R. 51

शामिल नहीं हैं। **श्री बिमल पार्षद जैन बनाम श्री नायदरमल (1960) 62 पी.एल.आर. 664** में फाल्शॉ जे. ने माना है कि 'मुकदमे' शब्द में अपील और संशोधन शामिल हैं क्योंकि वे मुकदमों की दोबारा सुनवाई की प्रकृति में हैं। मामले पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद हमारी निश्चित रूप से यह राय है कि इस धारा की उपधारा (2) के ऑपरेटिव भाग में प्रयुक्त 'मुकदमे और अन्य कार्यवाही' शब्द का अर्थ केवल उनके चरण में मुकदमा और अन्य प्रथम दृष्टया न्यायालय में मुकदमा कार्यवाहियां हैं।

जहां तक पुनरीक्षण याचिकाओं का सवाल है, इसमें कोई संदेह नहीं है कि उन्हें 'मुकदमा' शब्द में शामिल नहीं किया गया है क्योंकि उन्हें दोबारा सुनवाई की प्रकृति का नहीं कहा जा सकता है। यह कानून का एक प्रसिद्ध प्रस्ताव है कि किसी भी पक्ष को यह आग्रह करने का अधिकार नहीं है कि किसी विशेष आदेश को उक्त न्यायालय में निहित पुनरीक्षण की शक्तियों के तहत उच्च न्यायालय द्वारा संशोधित किया जाना चाहिए और हस्तक्षेप करना अकेले उच्च न्यायालय का अधिकार है। पुनरीक्षण में, जब भी वह ऐसा करना उचित समझे और जब भी उसके हस्तक्षेप के लिए पूर्ववर्ती शर्तें, जैसा कि इस न्यायालय में पुनरीक्षण की शक्तियों को निहित करने वाले कानून के प्रावधानों में उल्लिखित हैं, संतुष्ट हैं, - इस संबंध में**, दिनशॉ आयरनवर्क बनाम मैखान एडमजी एंड कंपनी** I.L.R. 1943 Bom 33 **बिशम्बर नाथ बनाम अचल सिंह** I.L.R. 55 All. 891 एवं **लक्ष्मणदास बनाम चुन्नीलाल** I.L.R. 1931 Nag 17, उनके द्वारा तय किए गए और ऊपर संदर्भित मामले में फाल्शॉ जे ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115

के प्रावधानों के तहत पुनरीक्षण की शक्तियों और दिल्ली की धारा 35 के प्रावधानों के तहत पुनरीक्षण की शक्तियों के बीच अंतर करने की मांग की है। अजमेर किराया नियंत्रण अधिनियम, 1952। उनका विचार है कि चूंकि किराया अधिनियम के तहत संशोधन का दायरा सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत संशोधन की तुलना में बहुत बड़ा था, इसलिए किराया अधिनियम के तहत संशोधन को कमोबेश उसी आधार पर माना जा सकता है। बहुत सम्मान के साथ हम इस दृष्टिकोण का समर्थन नहीं कर सकते। हो सकता है कि एक मामले में इस न्यायालय के हस्तक्षेप का दायरा कम हो और दूसरे में अधिक हो, लेकिन तथ्य यह है कि, दोनों में से किसी पर भी किसी भी पक्ष का अधिकार नहीं है। दोनों अधिनियमों के तहत प्रावधान उच्च न्यायालय को केवल रिकॉर्ड मंगाने और ऐसे आदेश पारित करने की शक्ति देता है जो वह उचित समझे। दूसरी अपील के विपरीत, जहां निचली अपीलीय अदालत के फैसले में कानून की त्रुटि होने पर यह अदालत हस्तक्षेप करने के लिए बाध्य है, यह अदालत पुनरीक्षण में हस्तक्षेप करने से इनकार कर सकती है यदि उसे लगता है कि पक्षों के बीच पर्याप्त न्याय किया गया है। कोई भी संशोधन, चाहे वह सिविल प्रक्रिया संहिता या किसी अन्य कानून के तहत हो, इन परिस्थितियों में मुकदमे की दोबारा सुनवाई के रूप में नहीं माना जा सकता है, क्योंकि खुद अदालत को इस तरह की सुनवाई करने का कोई अधिकार नहीं है।"

(15) दिल्ली और अजमेर किराया नियंत्रण अधिनियम, 1952 की धारा 35(1) की सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **हरि शंकर और अन्य बनाम राव गिरधारी लाई चौधरी**[10], के मामले में जांच की गई और अपील और पुनरीक्षण के बीच वास्तविक अंतर देखा गया । अपील का अधिकार अपने साथ कानून के साथ-साथ तथ्य पर भी सुनवाई का अधिकार रखता है, जब तक कि अपील का अधिकार प्रदान करने वाला क़ानून किसी तरह से सुनवाई को सीमित नहीं करता है, जैसा कि सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत उत्पन्न होने वाली दूसरी अपीलों में किया गया है, लेकिन शक्ति किसी पुनरीक्षण की सुनवाई के लिए आम तौर पर एक वरिष्ठ न्यायालय को दिया जाता है ताकि वह खुद को संतुष्ट कर सके कि किसी विशेष मामले का फैसला कानून के अनुसार किया गया है। **हरि शंकर** के मामले (supra) से निम्नलिखित अवलोकन पर ध्यान दिया जा सकता है: -

"अपील और पुनरीक्षण के बीच अंतर वास्तविक है। अपील का अधिकार कानून के साथ-साथ तथ्य पर भी दोबारा सुनवाई का अधिकार रखता है, जब तक कि अपील का अधिकार प्रदान करने वाला क़ानून किसी तरह से सुनवाई को सीमित नहीं करता है, जैसा कि हम पाते हैं, नागरिक प्रक्रिया संहिता के तहत उत्पन्न होने वाली दूसरी अपील में किया गया है। पुनरीक्षण सुनने की शक्ति आम तौर पर एक वरिष्ठ न्यायालय को दी जाती है ताकि वह खुद को संतुष्ट कर सके कि किसी विशेष मामले का फैसला कानून के अनुसार किया गया है। सिविल प्रक्रिया

[10] AIR 1963 S.C. 698

संहिता की धारा 115 के तहत, उच्च न्यायालय की शक्तियां यह देखने के लिए सीमित हैं कि क्या निर्णय किए गए मामले में, जहां कोई अस्तित्व में नहीं था, वहां क्षेत्राधिकार की धारणा हुई है, या जहां ऐसा था, वहां क्षेत्राधिकार से इनकार कर दिया गया है, या वहां कोई महत्वपूर्ण अनियमितता हुई है या उस क्षेत्राधिकार के प्रयोग में अवैधता. वहां अधिकार केवल क्षेत्राधिकार तक ही सीमित है। अन्य अधिनियमों में, शक्ति इतनी सीमित नहीं है, और उच्च न्यायालय खुद को संतुष्ट करने के लिए किसी मामले के रिकॉर्ड को मंगाने में सक्षम है कि वहां का निर्णय कानून के अनुसार है और मामले के संबंध में ऐसे आदेश पारित कर सकता है जैसा वह सोचता है। उपयुक्त। कानून के अनुसार वाक्यांश समग्र रूप से निर्णय को संदर्भित करता है, और इसे कानून की त्रुटि या सरल तथ्य के बराबर नहीं माना जाना चाहिए। यह समग्र निर्णय को संदर्भित करता है, जो कानून के अनुसार होना चाहिए, जो कि नहीं होगा, यदि कानून की गलती के कारण न्याय का गर्भपात होता है। इस प्रकार यह धारा क्षेत्राधिकार की त्रुटि को ठीक करने की शक्ति से अधिक बड़ी शक्तियां प्रदान करने के लिए तैयार की गई है, जिस तक धारा 115 सीमित है। लेकिन इसे नजरअंदाज नहीं किया जाना चाहिए कि यह धारा अपनी भाषा की स्पष्ट चौड़ाई के बावजूद, जहां यह उच्च न्यायालय को ऐसे आदेश पारित करने की शक्ति प्रदान करती है, जिसे उच्च न्यायालय उचित समझे, शुरुआती शब्दों द्वारा नियंत्रित किया जाता है, जहां यह कहता है कि उच्च न्यायालय स्वयं को संतुष्ट करने के लिए कि निर्णय कानून के अनुसार है, मामले का रिकॉर्ड मंगवा सकता है। इसका कारण यह है कि

यदि यह आवश्यक समझा जाता कि दोबारा सुनवाई होनी चाहिए, तो अपील का अधिकार अधिक उचित उपाय होगा, लेकिन अधिनियम कहता है कि आगे कोई अपील नहीं होनी चाहिए। जिस धारा से हम निपट रहे हैं, वह लगभग प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम की धारा 25 के समान है। उस अनुभाग पर कई मामलों में उच्च न्यायालयों द्वारा विचार किया गया है और विविध व्याख्याएं दी गई हैं। जिन शक्तियों को प्रदान करने की बात कही गई है, वे एक व्यापक स्पेक्ट्रम की शुरुआत करेंगी, एक छोर पर, इस दृष्टिकोण के साथ कि इसके तहत केवल कानून की पर्याप्त त्रुटियों को ठीक किया जा सकता है, और समाप्त हो सकता है; दूसरी ओर, हस्तक्षेप की शक्ति किसी अपील से थोड़ी बेहतर होती है। उन मामलों पर चर्चा करना बेकार है जिनमें से कुछ में अवलोकन संभवतः कुछ असामान्य तथ्यों की मजबूरी के तहत किए गए थे, यह कहना पर्याप्त है कि हम मानते हैं कि ऐसे अनुभागों के अर्थ की सबसे सटीक व्याख्या ब्यूमोंट, सी.जे. **बेल एंड कंपनी लिमिटेड बनाम वामन हेमराज** AIR 1938 में थी , जहां विद्वान मुख्य न्यायाधीश ने प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम की धारा 25 से निपटते हुए कहा:

धारा 25 का उद्देश्य उच्च न्यायालय को यह देखने में सक्षम बनाना है कि न्याय में कोई गड़बड़ी नहीं हुई है, कि निर्णय कानून के अनुसार दिया गया था। धारा उन मामलों की गणना नहीं करती है जिनमें न्यायालय पुनरीक्षण में हस्तक्षेप कर सकता है, जैसा कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 में है, और मैं निश्चित रूप से उन परिस्थितियों की विस्तृत परिभाषा

का प्रयास करने का प्रस्ताव नहीं करता हूं जो इस तरह के हस्तक्षेप को उचित ठहरा सकती हैं; लेकिन जो उदाहरण तुरंत दिमाग में आते हैं वे ऐसे मामले हैं जिनमें न्यायालय ने जो आदेश दिया उसका कोई क्षेत्राधिकार नहीं था, या जिसमें न्यायालय ने अपना निर्णय उन साक्ष्यों पर आधारित किया है जिन्हें स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए था, या ऐसे मामले जहां असफल पक्ष को कोई अधिकार नहीं दिया गया है। सुनवाई का उचित अवसर, या सबूत का बोझ गलत कंधों पर डाल दिया गया है। जहां भी न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि असफल पक्ष की सुनवाई कानून के अनुसार उचित नहीं हुई है, तो न्यायालय हस्तक्षेप कर सकता है। लेकिन मेरी राय में, न्यायालय को केवल इसलिए हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए क्योंकि वह सोचता है कि संभवतः मामले की सुनवाई करने वाले न्यायाधीश उसी निष्कर्ष पर पहुंचे होंगे जिस पर उच्च न्यायालय पहुंचा होगा। इस अवलोकन पर हमारी पूर्ण सहमति है।"

(16) **चानन दास बनाम भारत संघ और अन्य** [11] के मामले में इस न्यायालय की एक फुल बेंच को भी इसी तरह के विवाद से अवगत कराया गया था। **मन मोहन लाई** के मामले (supra) और **हरि शंकर** के मामले (supra) में निर्धारित कानून को ध्यान में रखते हुए, फुल बेंच ने निम्नलिखित टिप्पणियां कीं:-

> "मन मोहन लाई के मामले (1962) 64 PLR 51 में विद्वान न्यायाधीशों द्वारा लिया गया दृष्टिकोण को उपरोक्त मामले में उनके आधिपत्य द्वारा पुष्टि मिलती

---

[11] 1967 PLR 1

है। दिल्ली और आयर किराया (नियंत्रण) अधिनियम , 1952 की धारा 35 में शक्ति के बड़े आयाम के अनुरूप , सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के तहत उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण शक्ति की तुलना में, उनके आधिपत्य ने अब पुष्टि की है (A) कि पुनरीक्षण की शक्ति अपील के समान नहीं है, और (B) कि एक पुनरीक्षण यह मूल कार्यवाही की दोबारा सुनवाई नहीं है। इस प्रकार अपील के चरण में मूल कार्यवाही के मुकदमे के साथ पुनरीक्षण के चरण की कार्यवाही की आंतरिक एकता नहीं है जैसा कि **गरिकपति वीरयास** AIR 1957 SC 540 मामले में देखा गया है। यह पहले ही दिखाया जा चुका है कि शमशेर बहादुर जे. की राय कि पुनरीक्षण में स्थिति वही है जो मूल कार्यवाही की निरंतरता के संबंध में लंबित अपील के मामले में थी, **गुम्मलापुरा टैगगिना मटाडा कोट्टूरस्वामी** का मामला 1959 SC 577 द्वारा समर्थित नहीं है"।

(17) हम **केरल राज्य बनाम के.एम. चारिया अब्दुल्ला एंड कंपनी**[12] के मामले में के. सुब्बा राव, जे. द्वारा की गई निम्नलिखित टिप्पणियों पर भी गौर कर सकते हैं।

"...जब विधायिका एक मामले में अपील का अधिकार प्रदान करती है और दूसरे में संशोधन का विवेकाधीन उपाय, यह माना जाना चाहिए कि इसने दायरे और सामग्री में भिन्न दो क्षेत्राधिकार बनाए हैं। जब इसने अपील और पुनरीक्षण की परिचित

[12] AIR 1965 SC 1585

अवधारणाओं को पेश किया, तो यह मान लेना भी उचित है कि इन दोनों न्यायक्षेत्रों के बीच प्रसिद्ध अंतर को विधायिका द्वारा भी स्वीकार किया गया था। अपील और पुनरीक्षण के बीच एक आवश्यक अंतर है। यह भेद उक्त दो अभिव्यक्तियों में निहित अंतर पर आधारित है। अपील वास्तव में कार्यवाही की एक निरंतरता है, पूरी कार्यवाही अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष होती है और उसे निर्धारित वैधानिक सीमाओं के अधीन साक्ष्य की समीक्षा करने की शक्ति होती है। लेकिन पुनरीक्षण के मामले में, पुनरीक्षण प्राधिकारी के पास जो भी शक्तियाँ हों या न हों, उसके पास साक्ष्य की समीक्षा करने की शक्ति नहीं है जब तक कि क़ानून स्पष्ट रूप से उसे वह शक्ति प्रदान नहीं करता है। वह सीमा पुनरीक्षण की अवधारणा में अंतर्निहित है।"

(18) अपील के अधिकार और पुनरीक्षण की शक्ति के अस्तित्व के बीच अंतर की जांच शिव शक्ति कॉप. हाउसिंग सोसायटी का मामला (supra) में सर्वोच्च न्यायालय के हालिया फैसले में भी की गई है। उपरोक्त मामले में सुप्रीम कोर्ट की प्रासंगिक टिप्पणियों को इस प्रकार देखा जा सकता है: -

"13. पहला पहलू जिस पर विचार किया जाना है वह अपील और पुनरीक्षण का संबंधित दायरा है। कानून में यह बिल्कुल स्थापित स्थिति है कि अपील का अधिकार एक वास्तविक अधिकार है। लेकिन धारा 115 के तहत आवेदन करने का कोई

वास्तविक अधिकार नहीं है। हालांकि **शंकर रामचन्द्र अभ्यंकर बनाम कृष्णाजी दत्तात्रेय बापट** (1969)2 SCC 72 ; AIR 1970 SC 1 में कुछ टिप्पणियों पर बहुत जोर दिया गया था, ताकि अपील और पुनरीक्षण पर जोर दिया जा सके वही प्रस्ताव स्वीकार करना कठिन है। उक्त मामले में टिप्पणियों को संदर्भ से हटकर दोहराया जा रहा है। उस मामले में जो कहा गया वह उच्च न्यायालय की शक्ति के प्रयोग से संबंधित था, और उस संदर्भ में अपील और पुनरीक्षण में विचार की प्रकृति का उल्लेख किया गया था। उस मामले में यह कभी नहीं माना गया कि अपील पुनरीक्षण के बराबर है।

14. धारा 115 अनिवार्य रूप से उच्च न्यायालय के लिए अधीनस्थ न्यायालयों की निगरानी करने की शक्ति का एक स्रोत है। यह किसी भी तरह से अधीनस्थ न्यायालय के किसी भी आदेश से पीड़ित वादी को राहत के लिए उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाने का अधिकार नहीं देता है। धारा 115 के तहत संशोधन करने की गुंजाइश किसी मूल अधिकार से जुड़ी नहीं है।

15. संहिता की धारा 96 और 100 की भाषा जो अपीलों से निपटती है, उसकी तुलना संहिता की धारा 115 से की जा सकती है। जबकि पहले के दो प्रावधान विशेष रूप से अपील के अधिकार के लिए प्रदान करते हैं, धारा 115 की तुलना में यह स्थिति नहीं है। यह अधीनस्थ न्यायालय के आदेश से पीड़ित व्यक्ति द्वारा किए गए आवेदन की बात नहीं करता है। जैसा

कि ऊपर उल्लेख किया गया है, यह पर्यवेक्षी शक्ति का प्रयोग करके अधीनस्थ न्यायालय के कामकाज पर प्रभावी नियंत्रण रखने के लिए उच्च न्यायालय की शक्ति का एक स्रोत है।

16. एक अपील अनिवार्य रूप से मूल कार्यवाही की निरंतरता है और मुकदमा शुरू होने के समय लागू प्रावधान अपील के संबंध में भी लागू रहेंगे। ऐसा इसलिए है क्योंकि वादी के पास अपील का लाभ उठाने का निहित अधिकार है। जैसा कि **के.के. कपेन चाको बनाम प्रोविडेंट इन्वेस्टमेंट कंपनी (पी) लिमिटेड** (1977) 1 SCC 593 ; AIR 1976 SC 2610 में देखा गया था, केवल उन मामलों में जहां निहित अधिकार शामिल हैं, एक कानून की व्याख्या ऐसे अधिकार को प्रभावित करने वाले के रूप में की जानी चाहिए भावी रूप से क्रियाशील होना। अपील का अधिकार केवल क़ानून द्वारा है। यह (वैसे नहीं) किसी कार्रवाई में प्रक्रिया का आवश्यक हिस्सा है, लेकिन प्रवेश का अधिकार; एक वरिष्ठ न्यायालय और निचली अदालत की त्रुटि के निवारण के लिए उसकी सहायता और हस्तक्षेप का आह्वान करना। अवर न्यायाधिकरण के अभ्यास के इस सर्वोपरि सही हिस्से को बदनाम करना बेतुका लगता है। लॉर्ड वेस्टबरी के अनुसार, **अटॉर्नी जनरल बनाम सिल्लेम**, 33 LJ Ex. 209 ; 10 LT 434; अपील, जिसे तथाकथित कहा जाता है, "वह है जिसमें सवाल यह है कि क्या अदालत का आदेश जिससे जो अपील की गई है वह उस सामग्री पर सही थी जो उस अदालत के पास थी।" (**लॉर्ड डेवुइल पोन्नामल बनाम अरुमोगम** 1905 AC 383 , 390 के अनुसार। अपील का अधिकार, जहां

यह मौजूद है, सार का मामला है न कि प्रक्रिया का (**कोलोनियल शुगर रिफाइनिंग कंपनी बनाम इरविंग** 1905 AC 369)।

17. अपील का अधिकार वैधानिक है । अपील का अधिकार एक में निहित है। क़ानून द्वारा प्रदत्त होने पर यह एक निहित अधिकार बन जाता है। इस संबंध में अपील के अधिकार और मुकदमे के अधिकार के बीच आवश्यक अंतर है। जहां प्रत्येक व्यक्ति को मुकदमा दायर करने का अंतर्निहित अधिकार है और इसकी स्थिरता के लिए किसी कानून के अधिकार की आवश्यकता नहीं है, अपील की आवश्यकता होती है। जैसा कि **केरल राज्य बनाम के.एम.चारिया अब्दुल्ला एंड कंपनी** AIR 1965 SC 1585 में देखा गया था। अपील और पुनरीक्षण के अधिकार के बीच अंतर दो अभिव्यक्तियों में निहित अंतर पर आधारित है। अपील कार्यवाही की निरंतरता है: वास्तव में पूरी कार्यवाही अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष होती है और उसके पास निर्धारित वैधानिक सीमाओं के अधीन साक्ष्य की समीक्षा करने की शक्ति होती है। लेकिन पुनरीक्षण के मामले में, पुनरीक्षण प्राधिकारी के पास जो भी शक्तियाँ हों या न हों, उसके पास साक्ष्य की समीक्षा करने की कोई शक्ति नहीं है, जब तक कि क़ानून स्पष्ट रूप से उसे वह शक्ति प्रदान न करे। हरि शंकर बनाम राव गिरधारी लाई चौधरी एआईआर 1963 एससी 698 मामले में चार जजों की बेंच ने यह नोट किया था कि अपील और पुनरीक्षण के बीच अंतर वास्तविक है। अपील का अधिकार कानून के साथ-साथ तथ्य पर दोबारा सुनवाई का अधिकार भी रखता है, जब तक कि अपील का अधिकार प्रदान करने वाला क़ानून किसी तरह से सुनवाई को

सीमित नहीं करता है, जैसा कि संहिता के तहत उत्पन्न होने वाली दूसरी अपीलों में किया गया है। पुनरीक्षण सुनवाई की शक्ति आम तौर पर एक वरिष्ठ न्यायालय को दी जाती है ताकि वह खुद को संतुष्ट कर सके कि किसी विशेष मामले का फैसला कानून के अनुसार किया गया है। यह मानने के लिए संहिता की धारा 115 का संदर्भ दिया गया था कि उक्त प्रावधान के तहत उच्च न्यायालय की शक्तियाँ कुछ विशेष श्रेणियों के मामलों तक सीमित हैं। वहां अधिकार केवल क्षेत्राधिकार और क्षेत्राधिकार तक ही सीमित है।"

(19) हालांकि उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री **जसवन्त सिंह ने शिव शक्ति कूप, हाउसिंग सोसाइटी** के मामले (supra) में निर्धारित कानून को यह तर्क देकर अलग करने की कोशिश की है कि उपरोक्त मामले में शीर्ष अदालत के दायरे से निपट रही थी। संहिता की धारा 115 और 1973 अधिनियम की धारा 40 के तहत उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण शक्तियां बहुत व्यापक हैं और इसलिए, विद्वान वकील के अनुसार शिव शक्ति कूप पर कोई भरोसा नहीं किया जा सकता है। हाउसिंग सोसाइटी का मामला (supra) लेकिन हम उपरोक्त तर्क से सहमत होने में असमर्थता व्यक्त करते हैं। **शिव शक्ति कूप में. हाउसिंग सोसाइटी** के केस (supra) , सुप्रीम कोर्ट ने अपीलीय शक्तियों और पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के बीच अंतर किया है। जबकि यह माना गया है कि अपील का अधिकार, हालांकि क़ानून का निर्माण है, लिस के प्रारंभ पर क़ानून के अनुसार एक सूटर में अंतर्निहित था और इसलिए, इसे एक निहित अधिकार माना जा सकता है लेकिन ऐसा कोई अधिकार नहीं हो सकता है पुनरीक्षण

की शक्ति के संबंध में किसी भी व्यक्ति द्वारा अधिकार के रूप में दावा किया गया। अपीलीय शक्तियों और पुनरीक्षण शक्तियों के बीच अंतर, शिव शक्ति कूप में वर्णित किया गया है। हाउसिंग सोसाइटीओटीवीज़ (supra), 1973 अधिनियम में भी उन शक्तियों के भेद से पूरी तरह आकर्षित है। किसी भी मामले में, **मन मोहन लाई** के मामले (supra) में डिवीजन बेंच द्वारा और **हरि शंकर** के मामले (supra) में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा और **चानन दास** के मामले (supra) में इस न्यायालय की पूर्ण बेंच द्वारा निर्धारित कानून के साथ मिलकर **के.एम. अवलोकन चारिया अदबुल्ला** का मामला (supra) में इस बात में कोई संदेह नहीं छोड़ता है कि शिव शक्ति कूप के आवेदन के संबंध में श्री जसवन्त सिंह द्वारा भेदभाव की मांग की गई थी। हाउसिंग सोसायटी का मामला (supra) पूरी तरह से भ्रामक है। वास्तव में, हमने ऊपर भी देखा और पुनरुत्पादित किया है। दिल्ली और अजमेर किराया (नियंत्रण) अधिनियम, 1952 की धारा 35 में उक्त प्रावधान 1973 अधिनियम की धारा 40 के समान भाषा में दिया गया है और इसे 1973 अधिनियम की धारा 40 के प्रावधान के साथ लगभग बराबर माना जा सकता है। उपरोक्त मामलों में की गई टिप्पणियाँ पूरी तरह से संबंधित विवाद की ओर आकर्षित करती हैं।

(20) इस स्तर पर, हम **खज़ान चंद नाथी राम (supra)** के मामले में इस न्यायालय की एक डिवीजन बेंच द्वारा निर्धारित कानून पर भी ध्यान दे सकते हैं । उत्तरदाताओं के विद्वान वकील ने उपरोक्त मामले में की गई टिप्पणियों पर बहुत भरोसा करते हुए तर्क दिया कि अपील या

पुनरीक्षण के उद्देश्य के लिए लागू कानून उस तारीख का कानून होगा जब लिस शुरू होती है और दाखिल किए गए रिटर्न के मामले में या उसके कारण होता है। दाखिल किया जाए, तो यह तब शुरू हुआ माना जाएगा जब ऐसा रिटर्न दाखिल किया गया हो या उपरोक्त रिटर्न दाखिल करने के लिए नोटिस जारी किया गया हो। उत्तरदाताओं के विद्वान वकील ने **खज़ान चंद नाथी राम** के मामले (supra) में की गई निम्नलिखित टिप्पणियों पर भरोसा किया: -

> "34. ऊपर उल्लिखित विभिन्न निर्णयों के मद्देनजर और HVAT अधिनियम, 2003 की धारा 61(2) को पढ़ने पर यह निष्कर्ष निकाला गया है कि HVAT अधिनियम की धारा 61(2) उपरोक्त अधिनियम के प्रावधानों पर कोई पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं देती है। या तो स्पष्ट रूप से या आवश्यक निहितार्थ द्वारा। HVAT अधिनियम, 2003 की धारा 61 की उपधारा (2) आवेदन, अपील, पुनरीक्षण या अन्य कार्यवाहियों से संबंधित लंबित कार्यवाहियों को HVAT अधिनियम, 2003 के तहत गठित प्राधिकारियों को हस्तांतरित करने और इस प्रकार गठित प्राधिकारियों द्वारा निपटाए जाने पर विचार करती है। HVAT अधिनियम के तहत गठित ऐसे प्राधिकरणों को ऐसे आवेदन, अपील, पुनरीक्षण या ऐसी अन्य कार्यवाहियों के प्रयोजन के लिए अस्तित्व में माना जाता है ताकि ऐसे आवेदन, अपील, अन्य कार्यवाहियों के पुनरीक्षण की तिथि पर लागू हो सकें। बनाया या पसंद किया गया। चूंकि स्पष्ट रूप से या आवश्यक इरादे से, कोई पूर्वव्यापी प्रभाव देने की मांग नहीं

की गई है, इसलिए , HGST अधिनियम के निरसन के प्रभाव की जांच पंजाब जनरल क्लॉजेज अधिनियम, 1898 (जैसा कि हरियाणा के राज्य पर लागू है) की धारा 4 के संदर्भ में की जानी आवश्यक है।

35. पंजाब जनरल क्लॉजेज एक्ट, 1898 की धारा 4 (जैसा कि हरियाणा राज्य पर लागू है) ऐसी स्थिति में कानून का प्रासंगिक प्रावधान है, जहां पुराने अधिनियम को निरस्त करते हुए बाद के अधिनियम ने नए के किसी भी पूर्वव्यापी संचालन के लिए प्रावधान नहीं किया है। या तो स्पष्ट रूप से या निहितार्थ से कार्य करें। पंजाब जनरल क्लॉजेज एक्ट की धारा 4 इस बात पर विचार करती है कि स्पष्ट या परोक्ष रूप से किसी विपरीत इरादे के अभाव में, पुराने कानून के तहत कोई भी अधिकार, विशेषाधिकार, दायित्व या दायित्व पुराने कानून के तहत शासित होते रहेंगे। निर्धारिती को कर, ब्याज और जुर्माने की राशि पूर्व-जमा करने के दायित्व या दायित्व के साथ HGST अधिनियम के तहत अपील दायर करने का अधिकार है। इस तरह की बाध्यता, या दायित्व राज्य को कर, ब्याज या जुर्माना पूर्व जमा करने पर जोर देने का अधिकार प्रदान करता है। हुसैन कसम दादा (1953) 4 STC 114 के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों से और गरिकापतिवीरया का मामला AIR 1957 SC 540, यह स्पष्ट है कि अपील का अधिकार निहित है और वादी को प्राप्त होता है और आज भी मौजूद है। लिस

प्रारंभ होने की तिथि से. ऐसे अधिकार का प्रयोग वास्तव में तब किया जाता है जब प्रतिकूल निर्णय सुनाया जाता है। ऐसा अधिकार मुकदमा या कार्यवाही शुरू होने की तारीख पर प्रचलित कानून द्वारा शासित होना चाहिए, न कि उस कानून द्वारा जो इसके निर्णय की तारीख या अपील दायर करने की तारीख पर लागू होता है।

36. सिविल कार्यवाही में, लिस की प्रस्तुति पर शुरू होता है वादपत्र या मोटर वाहन अधिनियम के तहत मुआवजे का दावा करने वाले मामलों में दावा आवेदन भरने पर। सवाल यह है कि जब कराधान कानूनों के तहत वाद को शुरू करने के लिए कहा जा सकता है, तो HGST अधिनियम की धारा 25 एक निर्धारिती पर त्रैमासिक रिटर्न दाखिल करने और उस पर कर जमा करने का कर्तव्य बताती है। यदि ऐसे रिटर्न स्वीकार किए जाते हैं, तो कोई वाद नहीं है। नतीजतन, पार्टियों के पास अपील दायर करने का कोई अवसर नहीं होगा। हालाँकि, यदि ऐसे रिटर्न को स्वीकार नहीं किया जाता है तो कार्रवाई का कारण उस तारीख पर उत्पन्न होता है जब रिटर्न दाखिल करना आवश्यक होता है। कार्रवाई का कारण तब भी उत्पन्न माना जा सकता है जब एक निर्धारिती को पुराने अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार ऐसा करने में विफलता पर रिटर्न प्रस्तुत करने के लिए कहा जाता है। वास्तव में,

विट्ठलभाई नारणभाई पटेल (1961) 12 STC 219 (SC): AIR 1967 SC 344 के मामले में यही प्रासंगिक तारीख है ।

37. उपरोक्त चर्चा के मद्देनजर, हम अपील के उस अधिकार को मानते हैं एक निहित अधिकार है जैसे कि लिस के प्रारंभ होने की तिथि पर मौजूद हो। यह कहा जा सकता है कि एचजीएसटी अधिनियम के तहत रिटर्न दाखिल करने की तारीख या दाखिल करने की आवश्यकता होने पर लिस शुरू होती है। इसलिए, एचजीएसटी अधिनियम की धारा 39(5) के प्रावधान याचिकाकर्ता में निहित अपील के अधिकार को नियंत्रित करना जारी रखेंगे, जो कि पंजाब जनरल क्लॉजेज अधिनियम (हरियाणा राज्य पर लागू) की धारा 4 के संदर्भ में बचा हुआ है।"

(21) हमारी राय में, कानून का प्रस्ताव खज़ान में रखा गया है। **खज़ान चंद नाथी राम** के मामले (supra) का इन याचिकाओं के निर्णय पर कोई असर नहीं है क्योंकि उस मामले में, न्यायालय मुख्य रूप से अपील के अधिकार और इस सवाल से चिंतित था कि क्या एक पुनरीक्षण भी एक अधिकार के समान माना जाने योग्य था। अपील का मामला, बिल्कुल भी शामिल नहीं था। खज़ान चंदनाथी राम के मामले (supra) में निर्धारित कानून के प्रस्ताव के साथ कोई झगड़ा नहीं है कि अपील का अधिकार एक निहित अधिकार है क्योंकि यह लिस के शुरू होने की तारीख पर मौजूद है और कहा जा सकता है कि लिस के तहत शुरू हुआ है 1973 अधिनियम उस तारीख पर जब रिटर्न दाखिल किया जाता है या दाखिल किया जाना आवश्यक

होता है और अपील का उपरोक्त अधिकार सामान्य खंड अधिनियम की धारा 4 के संदर्भ में बचा रहेगा। हालाँकि, कानून का उपरोक्त प्रस्ताव वर्तमान मामले के तथ्यों से बिल्कुल भी आकर्षित नहीं है, क्योंकि वर्तमान मामले में शामिल विवाद पुनरीक्षण प्राधिकरण के पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के संबंध में है, यानी कि क्या पुनरीक्षण प्राधिकारी के पास जारी है मूल्यांकन आदेशों के संबंध में कार्यवाही शुरू करने की कोई शक्ति, जो वैट अधिनियम के प्रारंभ होने से पहले अंतिम रूप प्राप्त कर चुके थे और जब उपरोक्त अधिनियम के लागू होने की तिथि पर कोई मामला लंबित नहीं था।

(22) अब हम **सीमेंस इंडिया लिमिटेड बनाम महाराष्ट्र राज्य** (supra) में बॉम्बे हाई कोर्ट के फैसले का हवाला दे सकते हैं। उस मामले में, बॉम्बे हाई कोर्ट की एक डिवीजन बेंच ने प्रासंगिक वैधानिक प्रावधानों पर विचार करने के बाद फैसला सुनाया

> "12. मूल्यांकन आदेश के संबंध में स्वत: संज्ञान पुनरीक्षण कार्यवाही शुरू करने का आयुक्त का अधिकार इस संदर्भ में अपील के अधिकार के समान है, हालांकि यह अन्य मामलों में अपील के अधिकार से भिन्न हो सकता है। जिस समय मूल्यांकन कार्यवाही शुरू की जाती है, उस समय निर्धारिती को उस समय लागू मूल कानून के अनुसार इन कार्यवाही को अंतिम रूप देने का अधिकार होता है। इसमें अपील दायर करने का अधिकार शामिल होगा यदि यह उस समय लागू कानून के तहत निर्धारित है। इसमें संशोधन के लिए आवेदन करने का अधिकार या तत्कालीन लागू

मूल कानून के अनुसार आदेश को संशोधित करने का दायित्व भी शामिल होगा। लेकिन यदि मूल्यांकन कार्यवाही शुरू होने की तिथि पर लागू कानून के तहत एक समय-सीमा निर्धारित की जाती है जिसके भीतर पुनरीक्षण के अधिकार का प्रयोग किया जाना है, तो क्या ऐसी समय-सीमा मूल कानून का हिस्सा है या यह एक प्रक्रियात्मक कानून है?

(23) हमारी राय में, उपरोक्त निर्णय स्पष्ट रूप से भिन्न है। बॉम्बे हाई कोर्ट द्वारा विचार किया गया एकमात्र प्रश्न सीमा की अवधि के संबंध में था जो कानून में बाद के संशोधन के मद्देनजर पुनरीक्षण दाखिल करने के लिए लागू होगा - यह माना गया कि सीमा की अवधि को एक प्रक्रियात्मक कानून के रूप में माना जाना चाहिए एक ठोस कानून की तुलना में. उस निर्णय में की गई कुछ टिप्पणियाँ उत्तरदाताओं के कारण का समर्थन करती हैं, लेकिन हमारी राय में, वे केवल आज्ञाकारिता हैं और उन्हें कानून के किसी विशिष्ट प्रश्न पर राय की अभिव्यक्ति के रूप में नहीं लिया जा सकता है। इसके अलावा, **हरि शंकर** के मामले (supra) में सुप्रीम कोर्ट की आधिकारिक घोषणाओं को ध्यान में रखते हुए और **मन मोहन लाई** के मामले (supra) और **चानन दास** के मामले (supra) में इस न्यायालय द्वारा गिराए गए कानून को देखते हुए भी हमें कोई हिचकिचाहट नहीं है। यह मानते हुए कि पुनरीक्षण प्राधिकारी को प्रदत्त पुनरीक्षण की शक्ति को किसी पक्षकार को प्रदत्त अपील के अधिकार के समान या समान नहीं माना जा सकता है। .

(24) अन्यथा भी, हम पाते हैं कि 1973 अधिनियम की धारा 40 ने केवल पुनरीक्षण प्राधिकरण को एक शक्ति प्रदान की है जो पुनरीक्षण प्राधिकरण को स्वत: शक्तियां प्रदान करती है। आदेश में संशोधन की मांग करते हुए याचिका दायर करने के लिए विभाग को कोई संबंधित अधिकार नहीं दिया गया था। किसी सक्षम प्राधिकारी को कुछ शक्तियां प्रदान करने वाले क़ानून में एक सक्षम प्रावधान को किसी भी अधिकार के रूप में नहीं लिया जा सकता है, किसी पक्ष-विभाग के पक्ष में निहित अधिकार तो बिल्कुल भी नहीं।

(25) अब हम सामान्य खंड अधिनियम की धारा 4 के प्रावधानों से निपटेंगे। इसके पढ़ने से पता चलता है कि जब तक कोई अलग इरादा प्रकट न हो, निरसन किसी भी अधिकार, विशेषाधिकार या दायित्व या ऐसे किसी भी अधिकार, विशेषाधिकार, दायित्व, दायित्व आदि के संबंध में किसी कानूनी कार्यवाही या उपाय को प्रभावित नहीं करता है। वैट की धारा 61 के आधार पर अधिनियम, विधानमंडल ने, 1973 के अधिनियम को निरस्त करते हुए, उस अधिनियम के तहत किसी भी प्राधिकारी को दिए गए या पसंदीदा लंबित आवेदन, अपील, पुनरीक्षण और अन्य कार्यवाहियों को बचाया और उसे उस अधिकारी या प्राधिकारी द्वारा निपटान के लिए स्थानांतरित कर दिया, जिसके पास मनोरंजन करने का अधिकार क्षेत्र होता। नए अधिनियम के तहत ऐसे आवेदन आदि। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि वैट अधिनियम की धारा 61 को लागू करते समय विधानमंडल द्वारा एक **अलग मंशा** व्यक्त की गई है। इस प्रकार, उपरोक्त निरसन खंड का प्रभाव स्पष्ट रूप से सामान्य खंड अधिनियम की धारा 4 के

संचालन को बाहर कर देता है। इसलिए, वह धारा प्रतिवादी नंबर 2 द्वारा की गई कार्रवाई का बचाव करने के लिए राज्य के बचाव में नहीं आ सकती है। इस संबंध में, हम **कलावती देवी हरलालका** के मामले (supra) में सुप्रीम कोर्ट की निम्नलिखित टिप्पणियों पर ध्यान दे सकते हैं: -

> "यह सच है कि कोई अलग इरादा प्रकट होता है या नहीं, यह धारा 297(2) की भाषा और सामग्री पर निर्भर होना चाहिए। हालाँकि, हमें ऐसा लगता है कि ऊपर उल्लिखित इतने सारे मामलों में से कुछ को सामान्य धारा अधिनियम की धारा 6 के तहत परिणाम के अनुरूप और कुछ को धारा 6 के तहत परिणाम के विपरीत प्रदान करके, संसद ने स्पष्ट रूप से इसके विपरीत इरादे का सबूत दिया।"

(26) उपरोक्त चर्चा के मद्देनजर, हम पक्षकारों के वकील द्वारा उठाए गए अन्य बिंदुओं से निपटना आवश्यक नहीं समझते हैं।

(27) परिणामस्वरूप, रिट याचिकाएँ स्वीकार की जाती हैं। प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा पारित आदेश दिनांक 12 जुलाई 2000 को रद्द किया जाता है। हालाँकि, पार्टियों को अपनी लागत स्वयं वहन करने के लिए छोड़ दिया गया है।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं

किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

रितिज़ अरोड़ा

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

(TRAINEE JUDICIAL OFFICER)

(हरियाणा)